



तटस्थ उद्धरण
2021:CGHC:5173

1

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

आपराधिक पुनरीक्षण क्रमांक 217/2012

दिनांक 29.01.2021 को आदेश सुरक्षित रखा गया

दिनांक 25.02.2021 को आदेश पारित किया गया

1. श्यामलाल फेकर, उम्र लगभग 48 वर्ष, पुत्र खोरबाहरराम फेकर,

नि. सैहा, थाना पलारी, जिला रायपुर (छ.ग.)

2. रमेश धीवर, उम्र लगभग 41 वर्ष, पुत्र घसियाराम धीवर,

नि. पुरानी बस्ती, पलारी, थाना पलारी, जिला रायपुर (छ.ग.)

---- आवेदक

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य, थाना खरोरा, जिला रायपुर (छ.ग.) के माध्यम से

---- प्रतिवादी

आवेदकों के लिए: श्री अरविंद सिंह, अधिवक्ता

प्रतिवादी के लिए: श्री आनंद वर्मा, उप० जी० ए०

माननीय श्रीमती. न्यायमूर्ति विमला सिंह कपूर

सीएवी आदेश



1. वर्तमान पुनरीक्षण आवेदकों द्वारा आदेश दिनांक 18.01.2012, जो कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, रायपुर द्वारा सत्र परीक्षण क्रमांक 212/2011 में पारित किया गया था, के विरुद्ध दायर किया गया है, जिसमें उनके विरुद्ध धारा 306 एवं 420 भारतीय दंड संहिता (भा०दं०सं०) के तहत आरोप गठित किए गए हैं।

2. संक्षेप में अभियोजन का मामला यह है कि, 07.07.2011 को मृतक नंदलाल निषाद द्वारा आत्महत्या किए जाने संबंधी मर्ग सूचना नारायण प्रसाद निषाद द्वारा दी गई, जिसके आधार पर प्रधान आरक्षक जयनाथ सिंह द्वारा थाना खरोरा, जिला रायपुर में अपराध क्रमांक 232/11 धारा 306 एवं 420/34 भा०दं०सं० के तहत प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ०आई०आर०) दर्ज की गई। आरोप है कि आवेदकों ने "आस्था गोट फार्मिंग प्रा. लि." नामक कंपनी का गठन किया, जिसमें मृतक भी एक एजेंट के रूप में कार्यरत था। आवेदकों ने मृतक के माध्यम से धनराशि संग्रह कर उसे कंपनी में निवेश करने हेतु प्रेरित किया, यह वादा करते हुए कि एक निर्धारित अवधि में धनराशि दोगुनी हो जाएगी। इसके अतिरिक्त, मृतक को यह आश्वासन दिया गया था कि यदि वह ₹25,00,000/- का लक्ष्य प्राप्त कर लेता है, तो उसे एक "ऑल्टो कार" एवं ₹12,500/- मासिक रॉयल्टी प्रदान की जाएगी। परंतु, जब मृतक ने यह लक्ष्य प्राप्त कर लिया, तो उसे यह लाभ प्रदान करने के बजाय, आवेदकों ने अपने रिश्तेदारों को इसका लाभ दे दिया, जिससे मृतक मानसिक रूप से अत्यधिक तनाव में आ गया। इसके अलावा, एक अन्य आरोपी नवीन साहू (जो इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं है, परंतु एफ०आई०आर० में नामित है), ने मृतक से ₹3,00,000/- लेकर उसके भतीजे को पटवारी की नौकरी दिलाने का वादा किया था, परंतु ना तो उसने नौकरी दिलाई, ना ही संपूर्ण धनराशि लौटाई। केवल ₹1,70,000/- ही मृतक को वापस लौटाए गए, शेष ₹1,30,000/- स्वयं रख लिए गए। जब मृतक ने नवीन साहू से शेष धनराशि की मांग की, तो उसने न केवल पैसे लौटाने से इनकार किया, बल्कि मृतक को पुलिस में फंसाने की धमकी भी दी। इस तरह, आरोपियों द्वारा किए गए कृत्यों से मृतक अत्यधिक मानसिक तनाव में आ गया, जिसके परिणामस्वरूप उसने अपने घर की रसोई में फांसी लगाकर आत्महत्या



कर ली। मृतक की पैंट की जेब से पुलिस ने एक सुसाइड नोट बरामद किया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि मृतक ने किस तरह की प्रताड़ना का सामना किया था। पोस्टमार्टम उपरांत एवं धारा 161 दंड प्रक्रिया संहिता (दं०प्र०सं०) के तहत गवाहों के बयान दर्ज करने के पश्चात, आवेदकों सहित नवीन साहू के विरुद्ध धारा 306 एवं 420/34 भा०दं०सं० के तहत अभियोग पत्र (चार्जशीट) न्यायालय में प्रस्तुत किया गया।

3. तत्पश्चात, दिनांक 18.01.2012 को, दोनों पक्षों की सुनवाई के उपरांत, सत्र न्यायालय ने समस्त आरोपियों के विरुद्ध धारा 306 एवं 420 भा०दं०सं० के तहत आरोप गठित किए।

4. उक्त आरोप निर्धारण आदेश दिनांक 18.01.2012 से व्यथित होकर, आवेदकों ने वर्तमान पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत की है।

5. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता का तर्क यह है कि, यदि एफ०आई०आर०, सुसाइड नोट एवं धारा 161 दं०प्र०सं० के तहत दर्ज गवाहों के बयानों को सत्य भी मान लिया जाए, तब भी धारा 306 एवं 420 भा०दं०सं० के तहत अपराध सिद्ध नहीं होते। उन्होंने धारा 107 भा०दं०सं० (उत्तेजन) का संदर्भ देते हुए तर्क प्रस्तुत किया कि अभियोजन द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य उन आवश्यक तत्वों को पूरा नहीं करते, जिनके आधार पर आवेदकों को धारा 306 भा०दं०सं० के तहत दोषी ठहराया जा सके। इसके अतिरिक्त, आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता का यह भी तर्क है कि अभियोजन द्वारा एकत्रित सामग्री किसी भी प्रकार से धारा 420 (धोखाधड़ी) एवं 306 भा०दं०सं० (आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरण) के अपराध को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

6. आरोप निर्धारण को चुनौती देने हेतु प्रस्तुत तर्कों में, आवेदकों ने यह भी कहा कि रिकॉर्ड में ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह सिद्ध हो सके कि उन्होंने किसी भी प्रकार से मृतक को आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित किया। इसके समर्थन में, आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित न्यायिक निर्णयों पर निर्भरता व्यक्त की: चित्रेश कुमार चोपड़ा बनाम राज्य (NCT दिल्ली) राज्य बनाम ओरिलाल जैसवाल एवं अन्य (पश्चिम बंगाल उच्च न्यायालय)



7. दूसरी ओर, राज्य पक्ष के विद्वान अधिवक्ता ने विवादित आदेश का समर्थन करते हुए इसे न्यायसंगत, विधिसम्मत एवं अभियोजन द्वारा संकलित साक्ष्यों पर आधारित ठहराया। राज्य पक्ष के अनुसार, एफ०आई०आर०, सुसाइड नोट एवं गवाहों के धारा 161 दं०प्र०सं० के तहत दर्ज बयानों से यह परिलक्षित होता है कि आरोपियों द्वारा किए गए धोखाधड़ीपूर्ण कृत्यों के कारण ही मृतक को आत्महत्या जैसा कठोर कदम उठाने के लिए बाध्य होना पड़ा।

8. इस मामले के गुण-दोष पर विचार करने से पूर्व, यह न्यायालय उचित समझता है कि मृतक द्वारा आत्महत्या से पूर्व छोड़े गए सुसाइड नोट पर दृष्टि डाली जाए, जिसमें उल्लेख किया गया है :-

“मैं यह पत्र अपने अंतिम जिवन लीला के समय लिख रहा हूँ। आप जानते होंगे कि मरते समय आदमी कभी झूट नहीं बोले मुझे निचे दिखने के लिए कुछ लोगो ने मुझे अपना मोहरा बनाया जिसमे प्रमुख 1/411/2 श्यामलाल फेकर 1/4 सरहा1/21/4 पलारी1/2 1/421/2 डॉ रमेश धीवर 1/4 पलारी1/2 जिन्होंने मेरे साथ बहुत बड़ा छल किया उन्होंने मुझे आस्था नेटवर्क की पतिक मे जोड़कर मेर अन्य व्यक्ति का लगभग 50 लाख रुपये इन्वेस्टमेन्ट कराया जिसका पुरा लाभ फेकर एवं रमेश धिवर खा गया मूझे एवं मेरे दो साथी - विकास दुबे 1/4 मोहदी1/2 नम्मू निषाद 1/4 मोहदी1/2 को मिलन बाली 1/4 मारुती कार1/2 अपने दोस्तों दिला दिया जिसकी गवाही नरायण निषाद 1/4 चिगरिया1/2 एवं विकास दुबे, नम्मू विषाद, बैबा निर्मलकर हैं। मैं चाहता हूँ की इस कम्पनी पुरी न्यायिक जांच होवे क्योंकि इस कम्पनी से मिलने वाली रायल्टी विगत 2 वर्षों से बन्द है। जबकी जिवन भर 12500/ रुपये रायल्टी देने का वादा किया था। ज्यादा जानकारी के लिए कम्पनी का केटलाक देखे। या 1/4 केसेट 1/2 मेरा सबसे और बड़ा फरवी प्रारपर सारागांव का व्यक्ति है। जिन्होंने मेरे से मेरे भौंचा की नौकरी के लिए 3 लाख रुपये मेरे घर से चार गवाहों के समक्ष लिया था, जिसमें दो सडडू निवासी, इन्दरम निषाद एवं बहुर निषाद तथा दो चिगरिया निवासी नरायाण निषाद, एवं जिहान निषाद 1/4 गवह 1/2 के रूप में सामिल था। परन्तु नौकरी नहीं लगने के बाद मैं उसे पैसा



वापसी के लिए कहा तो मुझे अपने आपको पुलिस का आदमी बताकर पैसा देने के लिए नकारता रहा। बाद में उन्होंने दो किस्त में मुझे प्रथम 1 लाख 1/4 एक लाख 1/2 तथा दूसरा 70 सत्तर हजार रुपये वापस किये अभी तक 1.30 लाख एक लाख तीस हजार रुपये उसके पास बकाया है। इसके अलावा मेरो कोई समस्या नहीं था। जिसके लिए मुझे सरमिन्दा होना पड़े। मैं चाहता हूँ की इन तीनों व्यक्ति से सघन पुछताक्ष करे एवं मुझे न्याय दिलाकर मेरी आत्मा को शान्ती प्रदान करे!

मेरा परिवार मुझे सबसे ज्यादा चाहते थे मेरे जाने के बाद सभी लोग अकेले रह जायेंगे मैं आपको बताना चाहता हूँ की मेरे आत्महत्या के पिछे मेरे परिवार से कोई शिकायत नहीं है। क्योंकि आज तक मुझे सभी अच्छा स्नेह दिया है।''

यदि उपरोक्त सुसाइड नोट को ध्यान में रखा जाए, तो यह स्पष्ट होता है कि आरोपी आवेदक श्यामलाल फेकर और रमेश धिवर ने मृतक से धोखाधड़ी की। उन्होंने मृतक को अपनी कंपनी "आस्था गोट फार्मिंग प्राइवेट लिमिटेड" में ₹50 लाख निवेश करवाया, लेकिन उसे ₹12,500/- मासिक रॉयल्टी और ऑल्टो कार का लाभ प्रदान नहीं किया, जबकि आश्वासन दिया गया था कि ₹25 लाख जमा करने के पश्चात उक्त लाभ उसे प्राप्त होंगे। सुसाइड नोट के अनुसार, आरोपी श्यामलाल फेकर और रमेश धिवर ने ये लाभ मृतक के स्थान पर अपने कुछ मित्रों को दे दिए। मृतक के भाई नारायण निषाद द्वारा दी गई मर्ग सूचना के आधार पर दर्ज एफ०आई०आर० की सामग्री से भी यह परिलक्षित होता है कि उक्त दोनों आरोपी/आवेदकों ने मृतक के साथ धोखाधड़ी की एवं उसे मानसिक रूप से प्रताड़ित किया, जिसके परिणामस्वरूप उसने फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली। मृतक की पत्नी गीतेश्वरी निषाद के धारा 161 दं०प्र०सं० के तहत दर्ज बयान से भी यह सिद्ध होता है कि आत्महत्या करने से 4-5 दिन पूर्व मृतक ने उसे सूचित किया था कि उपरोक्त आरोपी व्यक्तियों द्वारा किए गए वायदे के अनुरूप उसे कोई लाभ नहीं मिला, जिससे वह मानसिक रूप से अस्थिर हो गया था। इसके अतिरिक्त, विकाश दुबे एवं नम्मू निषाद के बयानों से भी यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने क्रमशः ₹7,98,607/- और ₹2,68,000/- की राशि मृतक



के माध्यम से उक्त कंपनी में निवेश की थी, परंतु कंपनी बंद होने के पश्चात उन्हें एक भी पैसा वापस नहीं मिला।

9. न्यायिक दृष्टिकोण से इस मामले की समीक्षा हेतु, यह आवश्यक प्रतीत होता है कि आरोप गठन से संबंधित उच्चतम न्यायालय के निर्णयों से मार्गदर्शन प्राप्त किया जाए।

10. सुप्रीम कोर्ट द्वारा हाल ही में "दीपकभाई जगदीशचंद्र पटेल बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य" (निर्णय दिनांक 24.04.2019, आपराधिक अपील क्रमांक 714/2019) के प्रकरण में आरोप गठन एवं आरोपमुक्ति से संबंधित विधि पर महत्वपूर्ण टिप्पणियां की गईं।

इस निर्णय में यह प्रतिपादित किया गया कि आरोप गठन हेतु केवल यह पर्याप्त है कि न्यायालय उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अभियुक्तों के विरुद्ध विचारण हेतु पर्याप्त आधार है। इस उद्देश्य के लिए केवल एक प्रबल संदेह (strong suspicion) भी पर्याप्त है, बशर्ते कि यह संदेह किसी ऐसी सामग्री पर आधारित हो, जो विचारण (trial) की अवस्था में प्रमाण (evidence) के रूप में प्रस्तुत की जा सके। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अनुच्छेद निम्नानुसार उद्धृत किए जा रहे हैं :-

13. इस संदर्भ में, हम लाभप्रद रूप से उच्चतम न्यायालय के निर्णय "राज्य बनाम रामेश सिंह, ए.आई.आर. 1977 एससी 2018" का उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें आरोप निर्धारण (Framing of Charge) एवं आरोपमुक्ति (Discharge) से संबंधित सिद्धांतों को निम्नानुसार प्रतिपादित किया गया है:

धारा 227 और 228 को परस्पर जोड़कर पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि विचारण (Trial) के प्रारंभिक चरण में अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले साक्ष्यों की सत्यता, विश्वसनीयता एवं प्रभाव को अत्यधिक सूक्ष्मता से जांचने की आवश्यकता नहीं होती। न ही उस समय अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत संभावित बचाव (Defence) को अधिक महत्व दिया जाता है। विचारण के इस प्रारंभिक चरण में न्यायाधीश के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि



वह अत्यधिक विस्तार से यह जांच करे कि यदि आरोपित तथ्यों को प्रमाणित कर दिया जाए, तो वे अभियुक्त की निर्दोषता से असंगत होंगे या नहीं।

वह मानक (Standard) जिसे अंतिम निर्णय के समय अभियुक्त के अपराधबोध (Guilt) या निर्दोषता (Innocence) को निर्धारित करने के लिए लागू किया जाता है, उसे धारा 227 या 228 के अंतर्गत आरोप निर्धारण के समय लागू नहीं किया जाता। इस स्तर पर न्यायालय को यह देखना आवश्यक नहीं है कि अभियुक्त के दोषसिद्धि (Conviction) के लिए पर्याप्त आधार है या यह विचारण निश्चित रूप से उसकी दोषसिद्धि पर समाप्त होगा। यदि केवल संदेह (Suspicion) की स्थिति बनी हुई है, तो मात्र संदेह को अपराध सिद्ध करने का आधार नहीं माना जा सकता।

हालांकि, यदि प्रारंभिक स्तर पर अभियुक्त के विरुद्ध कोई ऐसा प्रबल संदेह (Strong Suspicion) उत्पन्न होता है, जिससे यह अनुमान किया जा सके कि अभियुक्त ने अपराध किया है, तो न्यायालय यह नहीं कह सकता कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने का कोई उचित आधार नहीं है।

अभियुक्त के अपराध का जो अनुमान इस चरण पर लगाया जाता है, वह फ्रांस की आपराधिक विधि (Criminal Law of France) की भांति नहीं होता, जहाँ अभियुक्त को तब तक दोषी माना जाता है जब तक वह अपनी निर्दोषता सिद्ध न कर दे। अपितु, यह केवल इस उद्देश्य से किया जाता है कि क्या न्यायालय को विचारण जारी रखना चाहिए या नहीं।

यदि अभियोजन द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य, जिसे यदि प्रतिपरीक्षण (Cross-Examination) से पहले पूर्ण रूप से स्वीकार भी कर लिया जाए, फिर भी यह अभियुक्त के अपराध को सिद्ध नहीं कर सकता, तो विचारण जारी रखने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं होगा। यदि



विचारण के अंत में अभियुक्त के अपराधबोध या निर्दोषता की स्थिति संदेहास्पद बनी रहती है, तो संदेह का लाभ अभियुक्त को देते हुए उसे दोषमुक्त कर दिया जाएगा।

किन्तु यदि यह स्थिति विचारण के प्रारंभिक चरण में, धारा 227 या 228 के अंतर्गत उत्पन्न होती है, तो सामान्यतः धारा 228 के अंतर्गत आरोप तय किया जाएगा, न कि धारा 227 के अंतर्गत आरोपमुक्त किया जाएगा।

21. आरोप निर्धारण के चरण में, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों के अनुसार अपेक्षित है, न्यायालय केवल "डाकघर" (Post Office) की भांति कार्य नहीं कर सकता। न्यायालय को प्रस्तुत सामग्री का परीक्षण अवश्य करना चाहिए। यह परीक्षण अभियोजन द्वारा प्रस्तुत एवं उस पर निर्भर सामग्री का होगा। हालांकि, यह परीक्षण इतना विस्तृत नहीं होना चाहिए कि न्यायालय स्वयं को पूर्ण विचारण कर रहे न्यायाधीश (Trial Judge) की स्थिति में रख ले और यह जांचने लगे कि अभियुक्त की दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त सामग्री है या नहीं। इस स्तर पर, केवल यह देखना आवश्यक है कि उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर अभियुक्त को विचारण का सामना करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। इसके लिए प्रबल संदेह (Strong Suspicion) पर्याप्त होता है। हालांकि, यह संदेह किसी ठोस सामग्री (Material) पर आधारित होना चाहिए। ऐसी सामग्री होनी चाहिए जिसे विचारण के दौरान प्रमाण (Evidence) के रूप में प्रस्तुत किया जा सके। प्रबल संदेह न्यायाधीश की व्यक्तिगत नैतिक धारणाओं (Moral Notions) पर आधारित नहीं हो सकता, बल्कि वह किसी ऐसे ठोस आधार पर होना चाहिए जिसे न्यायालय यह मानने के लिए पर्याप्त समझे कि अभियुक्त ने अपराध किया है।

11. सर्वोच्च न्यायालय ने "संघ बनाम प्रफुल्ल कुमार समल एवं अन्य" (AIR 1979 SC 366) के मामले में यह प्रतिपादित किया है कि न्यायालय के पास यह अधिकार है कि वह इस सीमित उद्देश्य से साक्ष्यों का परीक्षण (Sift) और मूल्यांकन (Weigh) कर सकता है कि क्या अभियुक्त



के विरुद्ध प्रथम दृष्टया (Prima Facie) मामला बनता है या नहीं। अतः, यदि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध एक गंभीर संदेह (Grave Suspicion) प्रकट करती है, जिसे अभियुक्त द्वारा संतोषजनक रूप से स्पष्ट नहीं किया गया है, तो ऐसे में न्यायालय आरोप निर्धारित (Framing of Charge) कर विचारण (Trial) जारी रखने के लिए पूर्णतः उचित रूप से अधिकृत होगा। हालांकि, सामान्यतः, यदि दो दृष्टिकोण समान रूप से संभव हैं और न्यायाधीश प्रस्तुत साक्ष्यों से यह पाता है कि अभियुक्त के विरुद्ध केवल संदेह उत्पन्न होता है, लेकिन यह संदेह गंभीर नहीं है, तो ऐसी स्थिति में अभियुक्त को आरोपमुक्त (Discharge) करने का न्यायाधीश को पूरा अधिकार होगा। यह स्थापित विधि (Settled Law) है कि कोई भी अनुमान (Presumption), चाहे वह कितना ही प्रबल क्यों न हो, वह प्रमाण (Proof) का स्थान नहीं ले सकता। उपर्युक्त निर्णय का प्रासंगिक अंश निम्नानुसार उद्धृत किया गया है:

10. अतः, उपर्युक्त प्राधिकारों (Authorities) के विचारण के आधार पर निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित होते हैं:

(1) न्यायाधीश, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अंतर्गत आरोप निर्धारण (Framing of Charges) के प्रश्न पर विचार करते समय, इस सीमित उद्देश्य से साक्ष्यों का परीक्षण (Sift) और मूल्यांकन (Weigh) करने का स्पष्ट अधिकार रखता है कि अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया (Prima Facie) मामला बनता है या नहीं।

(2) यदि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध गंभीर संदेह (Grave Suspicion) प्रकट करती है, जिसे अभियुक्त द्वारा उचित रूप से स्पष्ट नहीं किया गया है, तो ऐसे में न्यायालय आरोप निर्धारण करने और विचारण (Trial) आगे बढ़ाने के लिए पूर्णतः अधिकृत होगा।

(3) प्रथम दृष्टया (Prima Facie) मामला निर्धारित करने की कसौटी प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगी, और किसी सार्वभौमिक (Universal) नियम को स्थापित करना कठिन होगा। सामान्यतः, यदि दो दृष्टिकोण समान रूप से संभव हैं और न्यायाधीश प्रस्तुत



साक्ष्यों से यह पाता है कि अभियुक्त के विरुद्ध केवल संदेह उत्पन्न होता है, लेकिन यह संदेह गंभीर नहीं है, तो ऐसी स्थिति में अभियुक्त को आरोपमुक्त (Discharge) करने का न्यायाधीश को पूरा अधिकार होगा।

(4) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के अंतर्गत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, न्यायाधीश— जो कि वर्तमान संहिता के अंतर्गत एक वरिष्ठ एवं अनुभवी न्यायाधीश होता है— केवल अभियोजन (Prosecution) का प्रतिनिधि अथवा डाकघर (Post Office) की भांति कार्य नहीं कर सकता, बल्कि उसे मामले की व्यापक संभावनाओं (Broad Probabilities), साक्ष्यों एवं न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेजों के कुल प्रभाव (Total Effect), तथा मामले में विद्यमान मूलभूत त्रुटियों (Basic Infirmities) आदि पर विचार करना होगा। हालांकि, इसका यह अर्थ नहीं है कि न्यायाधीश, विचारण (Trial) की भांति मामले के गुण-दोष (Pros and Cons) का गहन अन्वेषण (Roving Inquiry) करे और साक्ष्यों का इस प्रकार परीक्षण करे मानो वह स्वयं विचारण कर रहा हो।

12. इसके अतिरिक्त, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने चितरेश कुमार चोपड़ा बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली सरकार) AIR 2010 SC 1446 के मामले में निम्नलिखित अभिव्यक्ति दी है:

"18..... यह एक स्थापित विधि-सिद्धांत (Trite Law) है कि आरोप निर्धारण (Framing of Charge) के चरण में, न्यायालय को अभिलेख (Record) पर उपलब्ध सामग्री एवं दस्तावेजों का इस दृष्टिकोण से मूल्यांकन (Evaluate) करना आवश्यक होता है कि क्या उनके सतही मूल्यांकन (Face Value) से यह स्पष्ट होता है कि आरोपित अपराध (Alleged Offence) के सभी आवश्यक तत्व (Ingredients) मौजूद हैं या नहीं। इस सीमित उद्देश्य के लिए, न्यायालय साक्ष्यों का परीक्षण (Sift) कर सकता है, क्योंकि प्रारंभिक चरण में यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि अभियोजन (Prosecution) द्वारा प्रस्तुत सभी तथ्यों को न्यायालय बिना किसी संदेह के अंतिम सत्य (Gospel Truth) के रूप में स्वीकार कर ले। इस स्तर पर, न्यायालय को केवल इस बात पर विचार करना होता



है कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध अपराध करने का प्रथम दृष्टया (Prima Facie) अनुमान (Presumption) लगाने का कोई आधार है या नहीं, न कि इस निष्कर्ष (Conclusion) पर पहुंचने के लिए कि विचारण (Trial) के अंत में उसका दोषसिद्ध होना असंभव है।"

13. अभियोजन एजेंसी द्वारा एकत्रित सामग्री से यह स्पष्ट है कि मृतक की अस्वाभाविक मृत्यु (Unnatural Death) आत्महत्या पत्र (Suicide Note), प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफ०आई०आर०), पोस्टमार्टम रिपोर्ट तथा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (दं०प्र०सं०) की धारा 161 के अंतर्गत दर्ज किए गए गवाहों के बयानों से स्पष्ट होती है। इसी प्रकार, तीन अभियुक्तों की संलिप्तता प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मृतक को फांसी लगाकर आत्महत्या के लिए प्रेरित करने में नकारा नहीं जा सकता, क्योंकि अभियोजन द्वारा संकलित सामग्री प्रथम दृष्टया (Prima Facie) यह दर्शाती है कि अभियुक्त श्यामलाल फेकर और रमेश धीवर ने मृतक को इस प्रकार प्रताड़ित किया कि उसने आवश्यक लक्ष्य प्राप्त करने के बावजूद भी वादा किए गए लाभों से वंचित रखा, जबकि वे लाभ उन्होंने अपने संबंधियों को उपलब्ध कराए। मृतक की पत्नी सहित अधिकांश गवाहों के बयानों से यह भी स्पष्ट होता है कि अभियुक्तों ने मृतक को उसके द्वारा एकत्रित की गई बड़ी धनराशि लेकर असहाय स्थिति में छोड़ दिया और उसके बाद भी उसे निर्धारित लक्ष्य प्राप्त करने के उपरांत वादा किए गए लाभ नहीं दिए। संभवतः अभियुक्तों/आवेदकों द्वारा अपने वचन का पालन न करने से मृतक हताशा (Frustration) में आ गया, जिसके कारण उसने आत्महत्या कर ली। इसी प्रकार, अभियुक्त नवीन साहू की भूमिका भी, जिसने मृतक से पटवारी की नौकरी दिलाने के नाम पर ₹1.30 लाख लेकर उसे वापस नहीं किया और उसे ऐसी कठिन परिस्थिति में डाल दिया, जो अंततः मृतक के लिए असहनीय हो गई, इस चरण में अस्वीकार नहीं की जा सकती। इस न्यायालय को इस स्तर पर मात्र यह देखना है कि क्या अभियुक्तों/आवेदकों के विरुद्ध अपराध कारित करने का कोई प्रथम दृष्टया आधार बनता है या नहीं, न कि इस निष्कर्ष पर पहुंचना कि यह आरोप निश्चित रूप से दोषसिद्धि (Conviction) तक पहुंचेगा या नहीं।



14. अतः, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त न्यायिक दृष्टान्तों के आलोक में यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि यदि प्रारंभिक चरण में अभियुक्तों द्वारा अपराध कारित किए जाने के संबंध में कोई गंभीर संदेह (Strong/Grave Suspicion) उभरता है, तो न्यायालय यह नहीं कह सकता कि अभियुक्तों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है। आरोप निर्धारण (Framing of Charge) के चरण में न्यायालय को साक्ष्यों का अत्यधिक सूक्ष्मता से परीक्षण करने की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि केवल प्रथम दृष्टया उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर विचार किया जाता है।

15. अब अभियुक्तों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत इस तर्क पर कि विचारण न्यायालय (Trial Court) ने अभियोग निर्धारण करते समय धारा 107 भारतीय दंड संहिता (भा०दं०सं०) में निहित 'उकसाने' (Abetment) के तत्वों पर विचार नहीं किया और इस प्रकार विधि के उल्लंघन में गंभीर त्रुटि की, इस न्यायालय को इस तर्क में कोई बल प्रतीत नहीं होता कि अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप तय नहीं किए जाने चाहिए थे, क्योंकि अभियोजन धारा 107 भा०दं०सं० में निहित उकसाने के तत्वों का पालन करने में असफल रहा है। इसी प्रकार, इस न्यायालय को अभियुक्तों/आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता की इस दलील में भी कोई ठोस आधार नहीं दिखाई देता कि अभियोजन द्वारा दर्ज किए गए गवाहों के बयानों में ऐसा कुछ भी नहीं आया है, जिससे अभियुक्तों/आवेदकों की संलिप्तता मृतक की मृत्यु से जोड़ी जा सके, क्योंकि अभियुक्तों के दोषी या निर्दोष होने का निर्धारण केवल विचारण (Trial) के बाद ही हो सकता है, जब वे न्यायालय में उपस्थित होकर साक्ष्य के माध्यम से परीक्षण किए जाएंगे।

16. इस न्यायालय का सुविचारित मत है कि विचारण न्यायालय ने विषय की प्रथम दृष्टया समीक्षा (Prima Facie View) ठीक प्रकार से की है और अभियुक्तों/आवेदकों के विरुद्ध धारा 420 एवं 306 भा०दं०सं० के अंतर्गत आरोप निर्धारण करते समय अपनी न्यायिक बुद्धि (Judicial Mind) का समुचित प्रयोग किया है। इस स्तर पर यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि विचारण न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष अविवेकपूर्ण (Unreasonable) या अनुचित (Unjustified) है,



जिसके कारण इस न्यायालय को पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार (Revisional Jurisdiction) के अंतर्गत हस्तक्षेप करना आवश्यक हो। उपलब्ध सामग्री से यह स्पष्ट होता है कि अभियुक्तों/आवेदकों के विरुद्ध धारा 306 एवं 420 भा०दं०सं० के अंतर्गत प्रथम दृष्टया अपराध स्थापित होता है। आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत न्यायिक दृष्टांत इस न्यायालय को उस दृष्टिकोण को अपनाने के लिए संतुष्ट नहीं कर पाते, जो विचारण न्यायालय द्वारा आरोप निर्धारण के दौरान अपनाए गए दृष्टिकोण से भिन्न हो, और इस कारण उन्हें अस्वीकार किया जाता है।

17. विचारण न्यायालय (Trial Court) द्वारा आरोप निर्धारण (Framing of Charge) में कोई त्रुटि (Infirmary) या विधिक दोष (Legal Flaw) इस न्यायालय की दृष्टि में परिलक्षित नहीं होता, अतः पुनरीक्षण याचिका (Revision Petition) में कोई ठोस आधार न होने के कारण इसे निरस्त किया जाता है।

18. तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय द्वारा मामले के गुण-दोष (Merits and Demerits) पर कोई अभिमत (Opinion) व्यक्त नहीं किया गया है तथा इस पुनरीक्षण याचिका के निर्णय में की गई किसी भी टिप्पणी को प्रकरण के गुण-दोष पर न्यायिक दृष्टिकोण के रूप में न समझा जाए।

19. चूंकि अभियुक्तगण/आवेदकगण दिनांक 30.03.2012 से स्थगन (Stay) का लाभ प्राप्त कर रहे थे, अतः अब वह स्वतः समाप्त (Vacated) हो जाता है। विचारण न्यायालय को निर्देशित किया जाता है कि वह यथाशीघ्र (As Expeditiously As Possible) एवं अधिमानतः (Preferably) आज से छह माह के भीतर विचारण प्रक्रिया (Trial) को पूर्ण करे।

20. तदनुसार, पुनरीक्षण याचिका निरस्त की जाती है।

सही/-
(विमला सिंह कपूर)
न्यायाधीश



अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

